Gaatha, Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025 : PP-16-26

गाथा (GAATHA)

स्त्री अस्मिता और विमर्श की सहकर्मी-समीक्षित, अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका

ISSN : 3049-3463(Online)

Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025

Page No.- 16-26

©2025 Gaatha

https://gaatha.net.in

Author :

आकाश कुमार

शोधार्थी, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा.

Corresponding Author :

आकाश कुमार

शोधार्थी, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा.

धरा से उपजे कनकीय व्यक्तित्व : माटी की मूरतें

'माटी की मूरतें' में रामवृक्ष बेनीपुरी ने ग्रामीण परिवेश के साधारण लोगों को असाधारण रूप से चित्रित किया है। वह केवल बाहरी विशेषताओं का वर्णन नहीं करते, बल्कि पात्रों के आंतरिक संघर्षों, सुख-दुख, आशाओं और निराशाओं को गहराई से दर्शाते हैं। इस संग्रह में रजिया, मंगल, बलदेव सिंह, देव, बैजू मामा, परमेश्वर जैसे कई चरित्र है, जो अपनी-अपनी कहानियों के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों, गरीबी, शिक्षा और जातिगत भेदभाव जैसी समस्याओं को उजागर करते हैं।

बेनीपुरी जी की भाषा शैली, सरल, सहज और प्रवाहमयी है, जिसमें ग्रामीण बोलियों और मुहावरों का सुंदर प्रयोग है, जो पाठकों को पात्रों से सीधा जोड़ते हैं। उनके शब्दचित्र इतने सजीव होते हैं कि पाठक प्रत्येक पात्र का एक स्पष्ट चित्र अपने मानस-पटल पर अंकित कर लेता है।

यह संग्रह केवल सामाजिक चित्रण तक सीमित नहीं है बल्कि इसमें मानवीय करुणा, प्रेम, त्याग और संघर्ष की भावना का भी गहरा विश्लेषण मिलता है। बेनीपुरी जी दिखाते हैं कि विषम परिस्थितियों में भी मनुष्य अपनी मान्यता को कैसे बचाए रखता है।

कलम के जादूगर, अद्भूत शैलीकार और कथाकार- नाटककार बेनीपुरी जी का जन्म 23 दिसंबर, 1899 बिहार के मुज्जफरपुर जिले के 'बेनीपुर' गाँव में हुआ था। बचपन में रामचरितमानस के संस्कार मिले और यहीं से इनकी साहित्य की तरफ रुचि बढ़ने लगी। बेनीपुरी जी के प्रिय कवि तुलसीदास थे और उनकी निम्नस्थ पंक्ति को कला की उत्कृष्ट परिभाषा मानते थे-

'सुंदरता कहँ सुंदर करई
छवि- गृह दीप- सिखा जनु बरई'

"बेनीपुरी अपने नाम की व्याख्या यों करते 'रामवृक्ष, यांनी राम का पेड़, यानी तुलसी ! इसलिए तुम लोग मुझे तुलसी भी कह सकते हो, रामवृक्ष बेनीपुरी का व्यक्तित्व बहुआयामी और अत्यंत प्रभावशाली था। वे एक साहित्यकार होने के साथ-साथ एक स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार और समर्पित सामाजिक कार्यकर्ता भी थ।

बेनीपुरी जी के व्यक्तित्व के बारे में ***रामस्वार्थ चौधरी 'अभिनव'*** लिखते है- "बेनीपुरी जी एक हस्ती थे जिसकी कोई मिसाल नहीं। दरअसल, व्यक्तित्व और कृतित्त्व, दोनों दृष्टियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र के समान ही उन्हें बहुमुखी प्रतिभा, स्वतंत्र स्वच्छंद प्रकृति, बेमिसाल मस्ती, अल्हड़, मनमौजीपन और बेजोड़ जिंदादिली सहज ही प्राप्त थीं। 'न दैन्यं न पलायनम्' **यही उनका जीवनादर्श था।"**

ऐसा ही कुछ ***राधाकृष्ण*** अपने स्मरण लेख में लिखते है- "बेनीपुरी मस्त तबीयत के आदमी थे जो सर्वदा संकटों, चुनौतियों और बाधाओं को अस्वीकार करते हुए चलते थे। गंभीर रहना या गंभीरतापूर्वक बातें करना उन्हें पसंद नहीं था। हर समय हंसने-हंसाने को उत्सुक। बेनीपुरी जी कभी भी अपने संघर्षों से नहीं डरे जहाँ उनको रास्ता नहीं मिलता वहां वो खुद अपना अलग रास्ता बनाकर बेफ्रिकों की तरह चलते थे। वे न झुकते थे और न किसी को झुकाना पसंद करते थे। बेनीपुरी जी सबसे मिलनसार व्यक्ति थे।

"बेनीपुरी जी माटी के आदमी थे। इसीलिए 'माटी की मूरतें' जैसी कालजयी रचना वे हिंदी संसार को दे सके। बेनीपुरी की मिट्टी, वहां के खेत, खलिहान, वहां के किसान, नंगे- भूखे बच्चे, चौर की बाढ़, बरसात में गांव का पानी से घिर जाना, नाव से वहां उनका पहुंचना, गांव में अपना पक्का मकान बनाने के लिए लहू-पसीना एक कर कंट्रोल के युग में सीमेंट जुटाना, अपने पुत्रों-बेटी-दामाद- पोतों के लिए चिंतित हो जाना और शायद की कोई मजलिस होती जब गांव की मछली पर नीबू निचोड़कर स्वाद ले-लेकर खाने या अपनी रानी के विषय में एक बार जिक्र नहीं करते।

लेखक स्वयं गांव में पलते हैं," सभी कठिनाइयों से होकर गुजरते हैं इसलिए गांव के अति साधारण लोगों की कठिनाइयां ही नहीं, उनके मनोविचारों को भी भलिभांति समझते हैं। इसलिए अपनी पुस्तक 'माटी की मूरतें' (रेखाचित्र) में उन्होंने जिन पात्रों को संजोया है, वे हू-ब-हू वैसे ही हैं। एक- एक पात्र को पढ़ते समय गांव का पूरा चेहरा सामने आ जाता है। गांव के रस्म-रिवाज से लेकर आपसी मेल-मिलाप और ईर्ष्या द्वेष के भाव भी वे अच्छी तरह समझते हैं। इसलिए उनके भाव और व्यवहार बड़ी सफलता से अपने साहित्य में उकेरते रहे।"

कहा गया है कि लेखक के व्यक्तित्व की झलक उनकी रचना में दिखाई देती है। उसी प्रकार बेनीपुरी जी का सपूर्ण जीवन संघर्ष इनके समस्त रचनाओं में दिखाई देता है। "यदि शैली ही मनुष्य के व्यक्तित्व की पहचान है तो कहना होगा कि बेनीपुरी जी उन थोड़े-से लेखकों में हैं जिनकी भाषा-शैली ही उनकी विशिष्ट पहचान है। हिंदी गद्य की अमूल्य धरोहर है उनका संपूर्ण साहित्य।"

अवधेश्वर अरुण लिखते है- "अपने जनवादी जीवन-बोध के कारण बेनीपुरी जी मानव मानव में भेद करते हैं, न कुलीनता-अकुलीनता की सीमा स्वीकार करते हैं और न नतमस्तक होते हैं। मंगल हलवाहा, सुभान खां, मखना, बलदेव सिंह, बैजू मामा आदि चरित्रों को देखकर स्पष्ट हो जाता है कि बेनीपुरी जी ने बिना भेदभाव के जो जहां महत्वपूर्ण पाया है, वहीं से उठा लिया है। 'सभी सयों के ऊपर मानव सत्य' के सिद्धांतों को उन्होंने अपनी पात्र-रचना में साकार कर दिखाया है। सबसे बड़ी बात यह है कि उनके अधिकांश पात्र ग्रामीण हैं और वे गढ़े हुए नहीं हैं, जीवन से लिए हुए हैं। बेनीपुरी मूर्त को चित्रित करते हैं, अमूर्त को मूर्त नहीं करते हैं। इसलिए उनके पात्रों का उनसे सीधा लगाव है। और ये पात्र 'माटी की मूरतें' रेखाचित्र में भलीभांति देखने को मिलते हैं।

1. सारा आँगन हँसी से भर गया :- यह वाक्य रजिया के जीवन में फैली सफलता, निश्छलता और उसकी जीवंतता का प्रतीक है। रजिया जब चुड़िया बेचने आती थी, तो वह सिर्फ चुड़ी नहीं बेचती थी, बल्कि अपने व्यवहार, हँसी और बातों से घर के माहौल को खुशियों से भर देती थी। बेनीपुरी जी याद करते है कि किस तरह रज़िया अपने चुलबुले

और हँसमुख स्वभाव से पूरे आँगन का वातावरण खुशनुमा बना देती थी। जब वह अपने चूड़ियों के सामान के साथ आँगन में आती, तो उसका हँसमुख चेहरा और खिलखिलाती हँसी हर किसी को आकर्षित कर लेती थी।

बेनीपुरी जी कहते है - "सारा आँगन हँसी से भर गया था और उस हँसी में रजिया के कानों की बालियों ने अजीब चमक भर दी थी, मुझे ऐसा ही लगा था।" उसकी हँसी में न केवल बचपन की मासूमियत थी, बल्कि वह जीवन की कठिनाइयों और संघर्षों के बावजुद सकारात्मक और आशा का संदेश भी देती थी। रजिया के व्यक्तित्व की यह विशेषता है कि वह स्वयं भी कठिन परिस्थितियों में भी सबको हँसाने और प्रसन्नचित्त रखने का गुण रखती है।

रजिया चूड़ीहारिन है वह अनिंघ सुंदरी है, बेनीपुरी जी इस दृश्य से भावुक होते है उन्हें अपनी और रजिया की जीवनयात्रा का स्मरण हो जाता है दोनों के जीवन की राहें अलग-अलग है किंतु उन बचपन की स्मृतियों में रजिया की हँसी आज भी गुंजती है। बेनीपुरी जी लिखते है जब मैं नेता बन गया, चुनाव का प्रचार करने के लिए रजिया के गाँव गया था। उस वक्त रजिया किसी भिखारिन की तरह रोग और बुढ़ापे का असमय शिकार हो गयी थी। फिर भी उसने मुझसे मिलने का सामर्थ्य दिखलाया मुझसे मिलने के लिए उसने मुझे अपने घर बुलवाया। लिखते हैं- "हाँ, मेरे सामने रजिया खड़ी थी। दुबली-पतली, रूखी-सूखी । किन्तु, जब नजदीक आकर उसने 'मालिक, सलाम' कहा, उसके चेहरे से एक क्षण के लिए झुर्रियां कहाँ चली गई, जिन्होंने उसके चेहरे को मकड़जाला बना रखा था। मैंने देखा; उसका चेहरा अचानक बिजली के बल्ब की तरह चमक उठा और चमक उठी हैं आज फिर वे चाँदी की बालियाँ और देखो, अपने को पवित्र कर लो ! लेखक यह दर्शाते है कि समय और संघर्ष के बोझ तले दबे होने के बावजूद भी, रज़िया के मन और हृदय की मासूमियत, उसकी मुस्कराहट, आत्मीयता और आकर्षण आज भी जीवित है। यही खूबी उसे विशिष्ट और प्रेरणादायी बनाती है।

'सारा आँगन हँसी से भर गया' यह कथन न केवल रज़िया के स्वभाव को उजागर करता है, बल्कि ग्रामीण समाज के जीवंत, पवित्र और भावनाओं से पूर्ण जीवन-दृश्य का भी सुंदर चित्रण करता है। यह पंक्ति पाठक को भी उस मासूमियत, जीवन्तता और सकारात्मकता का अनुभव कराती है जो किसी साधारण-सी लड़की में छुपा हुआ था।

2. धन्य है वह नारी, जिसे ऐसा पति मिला : - इस पंक्ति में बलदेव सिंह के आकर्षक, सुदृढ़ और प्रशंसनीय व्यक्तित्व का चित्रण है। जिनके बारे में लेखक कहते हैं "टूटे हुए तारे की तरह एक दिन हमने अचानक अपने बीच आकर उसे धम्म से गिरता हुआ पाया। ज्योतिर्मय, प्रकाशपुंज, दीप्तिपूर्ण! और, उसी तारे की तरह एक क्षण प्रकाश दिखाया, हमें चकाचौंध में डाल वह हमेशा के लिए चलता बना।"*

जिसको देखकर युवतियाँ मन ही मन उसकी चाहना करती थीं और सोचती थीं कि धन्य है वह नारी जिसे बलदेव सिंह जैसा पति मिले, अर्थात् प्रेम, बल, सौंदर्य और व्यक्तित्व की ऐसी मिशाल बहुत ही दुर्लभ होती है।

बेनीपुरी जी लिखते है "जिस शरीर को देख-देखकर आँखे नहीं अघाती थीं, माँएँ जिसे देखकर कहतीं, 'मेरा बेटा ऐसा ही शरीर-धन पावे।' युवतियाँ मन-ही-मन गुनीं-धन्य है वह नारी, जिसे ऐसा पति मिला; अगले जनम में हे भगवान् ! मुझे बलदेव सिंह की ही दासी बनाना।" बलदेव सिंह का शरीर इतना सुंदर, गठीला और तेजस्वी था कि लोग उसके रूप-रंग की खुले दिल से प्रशंसा करते थे। गावँ की माएँ उसकी शक्ति, स्वास्थ्य और सुंदरता को देखकर आशीर्वाद देती थीं कि उनके बेटे भी ऐसे ही बने, यह किसी युवक के लिए बहुत बड़ा सम्मान माना जाता है।

बलदेव सिंह का स्वभाव बच्चों सा निरीह, निर्विकार ! चहरे पर हमेशा मुस्कुराहट खिलती थी। स्वभाव में नम्रता, कभी क्रोध नहीं आता था। सेवा करने को सर्वदा तैयार रहे थे। बूढ़ों की आँखें हमेशा उनको आशीर्वाद देती। जवानों के तो वह देवता बन चुके थे। बलदेव सिंह के शारीरिक सौंदर्य को देखकर उनके चारित्रिक बल और समाज में उसकी लोकप्रियता का बोध होता है। उनका आकर्षक व्यक्तित्व नारी-पुरुष, सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है।

यह कथन केवल किसी के बाह्य सौंदर्य की प्रशंसा नहीं करता, बल्कि उस संपूर्णता की सराहना है जिसमें

शारीरिक क्षमता, सुंदरता, और नैतिक गुणों का संगम है। लेखक ने इन पंक्तियों के माध्यम से बलदेव सिंह के व्यक्तित्व को इतना प्रभावशाली, आकर्षक तथा आदर्श बताया है कि उसे प्राप्त करना हर किसी के लिए गर्व और सौभाग्य की बात है।

3. अनुकरणीय, वंदनीय एवं पूजनीय व्यक्तित्वः - जिसमें सरजू भैया के समर्पित, सेवा-भाव और सादगीपूर्ण जीवन के अद्भुत चित्रण के माध्यम से उनके व्यक्तित्व को अनुकरणीय, वंदनीय और पूजनीय बताया गया है। सरजू भैया का जीवन हर किसी के लिए प्रेरणा है। वे अपनी संपन्नता और समृद्धि के बावजूद हमेशा दूसरों की सहायता में आगे रहते हैं। गाँव में किसी को भी सहायता की आवश्यकता पड़ती तो सबसे पहले सरजू भैया को ही याद किया जाता। वे अपनी सुख-सुविधाएँ त्यागकर भी गाँव-समाज की भलाई के लिए लगे रहते थे। उनका यह त्याग, निस्वार्थ सेवा और सहृदयता सभी के लिए अनुकरणीय बन जाती है।

बेनीपुरी जी लिखते है- "सरजू भैया की यह जो हालत है, वह अपने कारण नहीं, दूसरों के चलते। पराए उपकार के चलते उन्होंने न सिर्फ अपना शरीर सुखा लिया है, बल्कि अपनी संपत्ति की भी कुछ कम हानि नहीं की है।"

सरजू भैया का महत्व केवल अपने गांव तक सीमित नहीं था, बल्कि हर गाँववालों के लिए वे आदरणीय बन गए थे। उनकी उदारता, मिलनसारिता और सेवा-भाव उन्हें एक सम्माननीय स्थान दिलाते हैं। मुश्किल समय में, चाहे भूकंप हो या बाढ़, वे अपनी सुविधा न देखकर, दूसरों की भलाई के लिए हमेशा तत्पर रहते थे अपनी आर्थिक स्थिति बिगड़ जाने के बाद भी।

बेनीपुरी जी लिखते है- "गंगा भाई के घर में बच्चा बीमार है, वैध को बुलाने कौन जाएगा- सरजू भैया । हिरदे को बजार से कई सौदा सुलफ लाना है, वह किसे भेजे-सरजू भैया को। राजकुमार के मामाजी अपने गाँव मे सख्त बीमार हैं, उनकी खोज-खबर कौन लाए- सरजू भैया से बढ़कर कौन दूसरा धावन होगा? परमेश्वर की रजिस्टरी करनी है; शिनाख्त कौन करेगा- सरजू भैया। किसी के घर में शादी-ब्याह, यज्ञ जाप हो और सरजू भैया अस्त-व्यस्त रह। किसी की मौत हो जाने के पर, यदि वह अंधेरी रात में हो, तो निश्चय ही कफन खरीदने का जिम्मा सरजू भैया पर रहेगा।"

उनकी निस्वार्थता इतनी गहरी थी कि अपने खुद के परिवार और व्यवसाय को नुकसान पहुँचा कर भी वे सबकी भलाई में जुटे रहते थे। दुख की बात यह थी कि वही समाज, जिसके लिए वे अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते, समय आने पर उन्हें भूल गया। इसके बावजूद उनका निश्छल सेवा-भाव और बड़ी सोच उन्हें वास्तव में पूजनीय बना देता है, जैसे गाँव की माटी की सादी मूरतें भले आकर्षक न हों, पर उनमें जिंदगी और त्याग बसता है।

बेनीपुरी जी लिखते है- "मेरे क्षुद्र विचार से सरजू भैया का व्यक्तित्व अनुकरणीय ही नहीं, वंदनीय, पूजनीय है। जब-जब उन्हें देखता हूं, मेरा 'ज्ञानी' मस्तक आप-से-आप उनके चरणों में झुक जाता है।"xi सरजू भैया का व्यक्तित्व समाज के लिए वह आदर्श प्रस्तुत करता है, जिसे देखकर हर कोई अपने जीवन में ऐसे गुण अपनाना चाहे। उनकी सरलता, त्याग और सहयोग की भावना उन्हें न केवल अनुकरणीय, वंदनीय अपितु समाज के लिए पूजनीय भी बनाती है।

4. हलवाहा नहीं है, सवाँग हैः - रामवृक्ष बेनीपुरी ने इस पंक्ति का उपयोग मंगर के लिए किया है। मंगर गाँव का परिश्रमी, मजबूत और ईमानदार हलवाहा है, लेकिन केवल हल चलाने वाले साधारण मजदूर के रूप में उसकी पहचान करना उसके बहुआयामी व्यक्तित्व के साथ अन्याय होगा।

मंगर का चरित्र मेहनती, स्वाभिमानी और भावनाओं से भरपूर होने के साथ-साथ गाँव की जीवन-शैली का प्रतीक भी है। समाज में उसकी उपयोगिता, सहृदयता और आत्मसम्मान उसे आम हलवाहों से अलग करती है। बेनीपुरी लिखते है- "मंत्र का स्वाभिमान-गरीबों में भी स्वाभिमान? लेकिन, मंगर की खूबी यह भी रही है। मंगर ने किसी की बात कभी बरदाश्त नहीं की और शायद अपने से बड़ा किसी को मन से माना भी नहीं। "xv

'हलवाहा नहीं है, सवाँग है- इसका तात्पर्य है कि मंगर में सामान्य हलवाहे से कहीं अधिक खिचड़ी है; उसकी शारीरिक क्षमता, सहजता, आत्मसम्मान, व्यवहार और कार्य कुशलता उसे साधारण मजदूर से ऊँचा बना देते हैं। बेनीपुरी जी लिखते है- "आम हलवाहों के पीछे किसान जो लट्ठा लेकर पड़े रहते हैं, और तो भी वे जी चुराते, दिलाई करते, आज का काम कल के लिए छोड़ते, यह आदत मंगर में थी ही नहीं। यों ही रखवाली चाहे बोझों की सील हों या अनाज की या रुखी पतही की मंगर पर सब छोड़कर निश्चित सोया जा सकता था। दूसरा ऐसा 'जन' मिलेगा कहाँ? फिर क्यों न उसकी कद्र की जाए? मेरे बाबा कहते थे- मंगर हलवाहा नहीं है, सवाँग है। वह अपने सवाँग की तरह ही कभी कभी रुठ जाता था और जब-तब लोगों को झिड़क भी देता था। उसकी झिड़क सबसे सिर आँखों पर; उसका रुठना और उसकी मनौती होती । *xv

'सवाँग' शब्द यहाँ उसकी बहुरूपता और जीवंतता को दर्शाता है- मंगर न केवल खेत में हल चलाता है, बल्कि पूरे गाँव में उसकी एक अलग, विशिष्ट पहचान है। उसमें व्यवहार कुशलता, दृढ़ता, स्वाभिमान, और संवेदनशीलता है। बेनीपुरी जी ने 'माटी की मूरतें' में मंगर जैसे लोगों को साधारण समझे जाने के बावजूद जीवन और समाज के लिए अपरिहार्य और अद्भुत बताया है- क्योंकि उनमें 'जिंदगी' है, आत्मबल है, और जिजीविषा है।

5. चलती - फिरती चुड़ैल ! बामनी है : - रेखाचित्र 'रूपा की आजी' में यह पंक्ति गाँव की मानसिकता, अंधविश्वास और समाज की निष्ठुरता का प्रतीक बनकर उभरती है। रूपा की आजी के जीवन में घटी दुखद घटनाओं और पारिवारिक त्रासियों के चलते ग्रामीण समाज ने उसे 'डायन', 'चुड़ैल', 'बामनी' जैसे अमानवीय विशेषणों से पुकारना शुरू कर दिया था।

गाँव में एक के बाद एक उसके घर के सदस्यों ससुर, दादा, पति, बेटा, बहू की मृत्यु के बाद, समाज ने रूपा की आजी को 'चलती-फिरती चुड़ैल', 'बामनी', 'डायन' कहना शुरू कर दिया। लोगों ने माना कि उसकी छाया अशुभ है; वह अपने ही खानदान को 'खाती' जा रही है, जबकि असलियत में वह परिस्थितियों की मार झोलती अकेली औरत थी।

बेनीपुरी जी लिखते है- "रूपा की आजी हर व्रत और तीर्थ के बाद गाँव भर का चवकर लगाती। उत्सवों में बिन बुलाए ही हाजिर। उफ, यह डायन कब मरेगी? कब गाँव को इससे निजात मिलेगी? लोग मन ही मन यह मनाया जाता; किंतु ज्यों ही सामने आई नहीं उनकी खुशामदें होतीं। कहीं वह नाराज नं हो जाएँ; अपने ससुर पति, बेटे, और पतोहू को खाते देर न लगी, वह दूसरे के बाल-बच्चों पर क्यों ही तरस जाएगी? स्त्रियाँ उन्हें देखते काँप उठतीं, किंतु ज्यों ही वह उनके सामने आईं कि 'दादीजी' कहकर उनका आदर-सत्कार करना शुरू किया। vi।

वह स्त्री, जिसे लोग डर कर 'चुड़ैल', 'बामनी' कहते हैं, गांवभर में घूमती रहती है- रूपा को कंधे पर उठाए या उसका हाथ पकड़े। वह किसी अनहोनी के डर या सामाजिक बहिष्कार से न डरकर नित्य व्रत, पूजन और तीरथ करती है, और दुःख में भी अपने कर्तव्यों से विमुख नहीं होती।

बेनीपुरी जी रूपा की आजी को डायन, चुड़ैल कहना, इन सबको अंधविश्वास मानते है यह बात सुनकर उनके मामा जी एक घटना का जिक्र करते है और बताते है- इस गाँव में एक दुसाध परिवार रहने आया था। एक दिन रूपा की आजी उसके पास काम लेकर गई परंतु उस दिन उसका बेटा किसी और को अपनी जुबान दे चुका था। उन्होंने रूपा की आजी जिद्द पर अड़ गई थी कि मेरा काम आज ही होना चाहिए, इसी बात पर बहस हो गई और जाते-जाते रोते हुए उसने कहा- 'तुम मेरा अपमान करते हो इसलिए न कि मैं निपूती हूँ, मेरा लड़का होता..... 'अगले दिन उस बूढ़े के बड़े बेटे की मृत्यु हो जाती है और वे डरकर गाँव छोड़कर चले जाते है। ऐसी घटनाएं अक्सर मन में कई सवाल छोड़ जाती है। क्या सच में रूपा की आजी डायन थी, चुड़ैल थ बमनी थी या वह लोगों के अंधविश्वास का शिकार हुई थी?

यह सभी विशेषण (चुड़ैल, बामनी) समाज की रुढ़ियों, अंधविश्वास और नारी के प्रति अन्याय का जीवंत

चित्रण हैं। वास्तव में, रूपा की आजी जैसी महिलाएँ निष्ठुरता और कुप्रथाओं की शिकार होती हैं, परंतु उनके भीतर जीवन-संघर्ष, त्याग और मातृत्व के भाव पूरे तारतम्य के साथ विद्यमान रहते हैं। यह रेखाचित्र पाठक को सहानुभूति, करुणा और आत्ममंथन के लिए मजबूर करता है।

6. उज्जवल, ज्वलंत, दिव्य, ऊर्जस्वित : - 'देव' रेखाचित्र रामवृक्ष बेनीपुरी के सहपाठी देव के प्रेरक व्यक्तित्व की कथा है। इसमें लेखक ने देव के बचपन से युवावस्था तक के साहसी, निर्भीक, संघर्षशील और उज्ज्वल चरित्र का मार्मिक चित्रण किया है। बेनीपुरी जी ने अपने सहपाठी देव के लिए उज्जवल, ज्वलंत, दिव्य, ऊर्जस्वित जैसे शब्द का प्रयोग किया है।

उज्जवल अर्थात् देव की आत्मा और व्यक्तित्व हर परिस्थिति में स्वच्छ, निर्मल एवं आशा से भरा था। भले ही शारीरिक कष्ट झेले, उसकी आत्मा की निर्मलता कभी धूमिल नहीं हुई। विषम परिस्थिति में भी उसका मनोबल उज्ज्वल बना रहा। ज्वलंत अर्थात् संघर्ष, अत्याचार और अन्याय का सामना करते हुए भी देव का साहसिक स्वभाव सदा प्रज्वलित रहा। उसके भीतर अन्याय के विरुद्ध लड़ने की अपार ज्वाला थी, जिससे वह अपने साथी अन्यों के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बन गया। क्रूर पुलिसिया यातना के बावजूद उसकी जीवटता और साहस कभी नहीं बुझा। दिव्य अर्थात् देव का व्यक्तित्व साधारण होकर भी असाधारण था। उसकी निर्भीकता, सत्यनिष्ठा और संवेदनशीलता में एक अलौकिक और दिव्य तत्त्व था। दरअसल, उसी दिव्यता के कारण वह दूसरों की अपेक्षा अलग पहचाना गया- वह केवल एक सामान्य ग्रामीण नहीं, 'माटी की मूरतें' में शिव-जैसा देवत्व पाने वाला पात्र है।

ऊर्जस्वित अर्थात् यातनाओं, दर्द और संघर्षों के बावजूद देव के भीतर अद्भुत ऊर्जा थी। पुलिस की क्रूरता से उसका शरीर घायल था, परंतु उसकी आत्मा सकारात्मक ऊर्जा से ओतप्रोत थी- वह न कभी निराश हुआ, न टूटा। यह ऊर्जा ही उसके चरित्र की सबसे विशिष्ट पहचान बन जाती है।

बेनीपुरी लिखते है "देव धीरे-धीरे पतली से पतली डाली पर खिसकता गया और मैं देख ही रहा था, वह लपककर एक पका अमरुद पकड़ रहा था कि उसके पैर के नीचे की डाली टूट गई और देव बाएं हाथ लिए जमीन पर धम्म से आ गिरा। देखा; उसकी बाई बाँह निर्जीव-सी झूल रही है। मैंने समझा, अब इस ओर ध्यान जाते ही देव पीड़ा से चिल्ला उठेगा। लेकिन, वह जरा सा चौंका भर। जुड़ जाएगी, वह लापरवाही से बोला । "XVIII

कुछ वर्षों के बाद जब बेनीपुरी जी जेल में अपना सजा काट रहे थे एकदिन एक परिचित सूरत आने देखा, वह देव था जो अब सत्याग्रहियों की टोलियों का नेतृत्व कर रहा था इसी सिलसिले में जेल आया था, लेकिन जेल में उसकी अत्यधिक खातिरदारी हुई पर देव के आँखों में एक बूँद भी आँसू का नामों निशान नहीं था परन्तु रात में, जब वह सोता था, तो यों ही कहराता है। "दिन की रोशनी में मैंने देव को अच्छी तरह देखा। देह पर अब भी काले निशानों का दौर-दौरा था। किंतु उस काले निशानोंवाली देह के अंदर जो आत्मा थी उज्जवल, ज्वलंत, दिव्य, ऊर्जस्वित | "xix

इन विशेषणों के माध्यम से रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'देव' के पात्र को केवल पीड़ित या संघर्षशील नायक ही नहीं, बल्कि भारतीय ग्रामीण चेतना के आदर्श, प्रेरणा और शक्तिस्वरुप मानवीय रूप में चित्रित किया है। बेनीपुरी जी के शब्दों में, देव का अस्तित्व बाह्य क्षति या पीड़ा से नहीं, बल्कि उसके अंतर्मन की उज्जवल, ज्वलंत, दिव्य और ऊर्जस्वित आत्मा से परिभाषित होता है।

7. गृहस्थरुपी संतः - बालगोबिन भगत को गृहस्थरूपी संत के रूप में इसलिए चित्रित किया है क्योंकि वे एक सामान्य किसान और गृहस्थ जीवन जीते हुए भी अपनी सोच, आचरण और आस्था में किसी सच्चे संत जैसे थे। वे कबीरपंथी गृहस्थ संत थे परिवार और खेती करते थे, लेकिन मोह-माया, लोभ, झूठ, छल, प्रपंच और भौतिक आकर्षण से दूर रहते थे। उनका जीवन नियमबद्ध, सादा और तितिक्षा से भरा था, पहनावे में केवल लंगोटी और सर्दियों में कंबल, माथे पर चंदन तिलक और गले में तुलसी की माला। खेत में जो भी अनाज पैदा होता, उसे सबसे पहले पास के

कबीरपंथी मठ में 'भेंट' स्वरूप चढ़ा देते, फिर वहाँ से जो प्रसाद मिलता, उसी से अपने परिवार का पालन करते थे। "उनका कंठ एक-एक शब्द को संगीत के जीने पर चढ़ाकर कुछ को ऊपर स्वर्ग की ओर भेज रहा है और कुछ को इस पृथ्वी की मिट्टी पर खड़े लोगों के कानों की ओर। उनकी खैजड़ी डिमक डिमक बज रही है और वे गा रहे हैं-

'गोदी में पियवा, चमक उठे सखिया, चिहुँक उठे न!'

'तेरी गठरी में लगा चोर मुसाफिर जाग जरा।

वे कभी किसी का हक नहीं छीनते, किसी चीज को बिना अनुमति नहीं लेते, दूसरों के खेत में शौच तक नहीं जाते- यह अनुशासन, ईमानदारी और संवेदना उन्हें साधारण गृहस्थ से अलग बनाती है। संतों की तरह वे जीवन के कष्टों को भी सहज भाव से स्वीकार करते थे। पुत्र की मृत्यु जैसी कठिन घड़ी में भी वे भक्ति और जीवन-दृष्टि की उच्चता प्रकट करते हैं- शोक की बजाय आत्मा-परमात्मा के मिलन को उत्सव मानते हैं। बेनीपुरी जी लिखते है- "बालगोबिन भगत गाते-गाते कभी-कभी पतोहू के नजदीक भी जाते और उसे रोने के बदले उत्सव मनाने को कहते "आत्मा-परमात्मा के पास चली गई, विरहिणी अपने प्रेमी से जा मिली, भला इससे बढ़कर आनंद की कौन बात?"xx

वे विधवा-विवाह जैसे सामाजिक सुधारों के भी समर्थक थे अपने बेटे की मृत्यु के बाद बहू का पुनर्विवाह कराते हैं, जो समाज के लिए अनुकरणीय मिसाल है। इस प्रकार, बालगोबिन भगत गृहस्थ जीवन जीते हैं, पर उनका आचरण, सोच, त्याग और भक्ति सच्चे संत के गुणों वाला है। इसी वजह से उन्हें "गृहस्थरूपी संत" कहा गया है।

8. वह कलम टूट जाए, जो निंदा के लिए ही उठती हैः- रामवृक्ष बेनीपुरी के मशहूर रेखाचित्र 'भौजी' में उस भावदृष्टि को प्रकट करता है, जिसके अनुसार साहित्य और लेखनी का उद्देश्य किसी व्यक्तित्व या चरित्र की अनावश्यक निंदा नहीं, बल्कि उसके जीवन के मानवीय, सकारात्मक और प्रेरक पक्ष को सामने लाना है। बेनीपुरी जी ने अपने पारिवारिक जीवन की स्मृतियों में अपनी भाभी (भौजी) के व्यक्तित्व, उनकी कमियों और खूबियों सबका ईमानदारी से चित्रण किया है, परंतु कहीं भी उनके चरित्र, व्यवहार या निर्णयों की निंदा या उपहास करने का भाव नहीं रखा। 'भौजी' जैसी सामान्य गृहिणी, जिनकी छोटी-छोटी बातों पर घर-परिवार का सुख-दुख निर्भर करता है, उनका जीवन संघर्ष, सामंजस्य, अपनापन और ममताभाव ही साहित्य के योग्य विषय हैं; न कि उनकी ख़ामियाँ।

अजय तिवारी लिखते है- "भौजी" अपने स्वभाव की मधुरता से पूरे परिवार को जीत लेती है लेकिन चूल्हे अलग होने पर वे कर्कशा बन जाती हैं। उनके स्नेह का स्त्रोत सूखा नहीं था, दब गया था। चचेरे देवर के बच्चे को डंक लगने से बुखार हो जाता है तो वे अपने घर जाना न बनाकर बच्चे की सेवा करती हैं। भैया कहते हैं- 'झगड़ा हो तो ऐसा, मेरा खाना बंद हो गया। भौजी पुरुष द्वारा उत्पन्न स्वार्थ के विभाजन को मिटा देती हैं। इसलिए साधारण होकर भी असाधारण हैं। "xxii

9. मानवीय दुर्बलताओं और अच्छाइयों का संगमः - परमेसर का चरित्र मानवीय दुर्बलताओं और अच्छाइयों का संगम है। वह फिजूलखर्च है, आवारा है और घर को बर्बाद करने वाला है। कर्ज पर कर्ज लेता है, जिससे परिवार को दिक्कत होती है। वह गांजा और भांग जैसी नशे की लत का भी शिकार है। हालांकि, इन कमियों के बावजूद उसमें मानवीय संवेदनाएँ और प्रेम भी मौजूद है। वह अपने मित्रों के साथ भांग बांटता है, जिससे उसके सामाजिक स्वभाव का पता चलता है। परमेसर ग्रामीण परिवेश का एक यथार्थवादी प्रतिनिधि है। बेनीपुरी जी ने उसके माध्यम से गाँव के उन साधारण लोगों का चित्रण किया है, जो अपनी जीवन-शैली में कुछ दोष रखते हुए भी गाँव के सामाजिक ताने-बाने का अभिन्न अंग होते हैं। परमेसर का जीवन गाँव की मिट्टी से जुड़ा हुआ है, और उसकी आदतें और व्यवहार उसी ग्रामीण पृष्ठभूमि से प्रभावित हैं।

जी ने परमेसर का यथार्थवादी चित्रण किया है। उन्होंने उसके गुणों और अवगुणों को बिना किसी लाग-लपेट के प्रस्तुत किया है। परमेसर बीमार पड़ता है, गंदगी में रहता है, लेकिन लेखक ने इन सब बातों को भी सच्चाई के साथ

दर्शाया है। यह चित्रण पाठक को परमेसर से जोड़ता है और उसके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करता है। जहाँ उन्होंने एक साधारण ग्रामीण व्यक्ति की जटिलताओं, उसकी कमियों और उसकी मानवीय संवेदनाओं को बड़ी कुशलता से उकेरा है।

बेनीपुरी जी लिखते हैं, परमेसर कहा करता था "चाचाजी, सुख मिलता है या तो तकदीर से या मेहनत से। मेहनत मुझसे बनती नहीं, तकदीर अच्छी नहीं है। फिर भाँग पीकर हाहा-हीही करना और इसी हँसी-खुशी में जिंदगी गुजार देना बस, यही मुझसे होगा, मेरे लिए चिंता मत कीजिए।xxiv

'मालिक हैं सियाराम, सोच मन कोहे करें'

10. 'सरल, भोला-भाला, हास्यपूर्ण और अजीब चोरः - मामा के चरित्र का सबसे बड़ा और मार्मिक विरोधाभास है कि 30 वर्षों तक जेल आने-जाने और चोरी करने के निरंतर प्रयासों के बावजूद, वे कभी भी अपनी मूल ₹30 की आवश्यकता को पूरा नहीं कर पाए। इस स्थिति को दर्शाने के लिए बेनीपुरी जी कबीर के एक दोहे का वर्णन करते हैं-

"सिंहन के लेहड़े नहीं, हंसन की नहि पाँत,
लालन की नहिं बोरियाँ, साधु न चले जमात । "xx

बैजू मामा की चोरियों का मूल कारण किसी बड़े अपराध या धन संचय की लालसा नहीं है, बल्कि एक अत्यंत साधारण और मानवीय आवश्यकता है: ₹30 में एक अच्छी गाय या बैल खरीदने की इच्छा। इसलिए वे चोरियाँ भी कैसी करते? बेनीपुरी जी लिखते है- "बड़ी चोरी में बड़ा खतरा होता है। और खतरा लेने का इस बार मौका नहीं था। इसलिए छोटी-छोटी चोरियाँ तीस रुपए के लिए शुरू कीं। एक होटल से दो लोटे उड़ाए, दो रुपयों में बेच लिए। एक मंदिर के अहाते से दो कंबल मार लिये, तीन रुपए उनके आए। एक वकील के बरामदे से एक शॉल उचक लाए, चार रुपए आए। सबसे बड़ा शिकार एक गोदान से एक बोरे लाल मिर्चे का किया, जिससे उन्हें नकद बारह रुपए मिले। "xxv ऐसी चोरियां करते करते बैजू मामा ने इक्कीस रुपए जोड़ लिए थे। कुछ दिन तक छोटे मोटे हाथ मारने के बाद आखिरी तीन रुपए की जरूरत थी लेकिन अफसोस पकड़े गए।

वे मूलतः एक साधारण किसान थे और खेती के लिए बैलों की अनुपलब्धता ने उन्हें कर्ज लेने और फिर चोरी के रास्ते पर धकेल दिया। यह छोटी सी, लगभग तुच्छ ख्वाहिश उनके पूरे जीवन की चोरियों और परिणामस्वरूप भुगती गई 30 साल की जेल की सजा का एकमात्र कारण बनती है, जो उनके चरित्र की सरलता और भोलेपन को स्पष्ट रूप से दर्शाती है। उनकी चोरियों के पीछे कोई दुर्भावनापूर्ण इरादा नहीं था, बल्कि यह एक किसान की बुनियादी जरूरत को पूरा करने की एक बेमेल कोशिश थी।

बैजू मामा की जेल में रहने की आदत इतनी गहरी हो चुकी थी कि वे इसे एक प्रकार की 'सरकारी सेवा' मानते थे। वे यह भी उम्मीद करते थे कि सरकारी कर्मचारियों की तरह उन्हें भी इस 'सेवा' के बदले पेंशन मिलनी चाहिए। यह मानसिकता उनके चरित्र में एक गहरा, विडंबनापूर्ण हास्य जोड़ती है, क्योंकि एक चोर का जेल को अपनी 'कार्यस्थली' या 'घर' मानना अत्यंत अजीब और सामाजिक मानदंडों के विपरीत है। यह दर्शाता है कि लंबे समय तक कारावास ने उनके लिए स्वतंत्रता और कारावास के बीच की सीमाओं को धुंधला कर दिया था, और जेल ही उनके लिए एक परिचित, लगभग आरामदायक "घर" में बदल गई थी।

11. सद्गुणों की जीता-जागता मिसालः – सुभान खां के चरित्र के माध्यम से विभिन्न मानवीय एवं नैतिक गुणों का सजीव चित्रण मिलता है। वे अपने काम के प्रति पूरी ईमानदारी और निष्ठा रखते हैं। "जो कारीगर हैं, 'काम और अल्लाह' दोनों को सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। *xxvil काम में कभी भी कोई छल-कपट नहीं करते थे। सुभान खां सभी धर्मों का सम्मान करते हैं। वे मुसलमान होते हुए भी हिन्दू त्योहारों में खुलकर हिस्सा लेते थे और हिन्दू परिवारों के साथ आत्मीय संबंध रखते थे। वहीं हिन्दू परिवार भी उन्हें अपने पर्वों पर बुलाते थे। इससे गाँव में साम्प्रदायिक सद्भाव

की मिसाल कायम होती है।

बेनीपुरी जी लिखते है- "अपने जवार भर में उनकी बुजुर्गी की धाक थी। बड़े-बड़े झगड़ों की पंचायती में दूर-दूर के हिंदू मुसलमान उन्हें पंच मुकर्रर करते। उनकी ईमानदारी और दयानतदारी की कुछ ऐसी धूम थी। *xxvii वे बच्चों के प्रति स्नेही, मित्रवत एवं दयालु हैं। उनके जीवन में परिश्रम का विशेष महत्व है और वे आत्मनिर्भर रहते हैं। अपनी मेहनत से सब कुछ अर्जित करते हैं।

"शहरों की बीमारी' आखिर जब गांव में भी पहुंची और हिंदू- मुसलमान एक-दूसरे को 'समझ' लेने पर तुल गए। सुभान दादा में सामुदायिक मूल्य बने हुए हैं। वे अड़ जाते हैं, 'पहले मेरी कुर्बानी होगी, तब गाय की कुर्बानी हो सकेगी। "xxix

बेनीपुरी जी लिखते है- "जिनके दिमाग में आला खयाल थे और हृदय में प्रेम की धारा लहराती थी। वह प्रेम की धारा जो अपने-पराए सबको समान रूप से शीतल करती और सींचती है। मेरा सिर सिज्दे में झुका है- कर्बला के शहीद के सामने !"xxx

12. वंदनीय, अर्चनीय, महान मातृत्वः - बुधिया एक ऐसी स्त्री की कहानी है, जो बचपन में चुलबुली, आकर्षक और सारी बातों में पहचानी जाने वाली थी, लेकिन अब समय की कठोरता और जीवन संघर्ष के कारण वह बूढ़ी, थकी-हारी, दुबली-पतली और मात्र एक मां के रूप में जी रही है। बुधिया के चरित्र में मातृत्व का वह महान रूप दिखाई देता है जिसे देखकर लेखक गहरे सम्मान और श्रद्धा व्यक्त करता है। कठिनाई, गरीबी, पति के अकाल मृत्यु और सामाजिक तिरस्कार के बावजूद, वह अपने चार बच्चों का पालन पोषण पूरी निष्ठा और त्याग के साथ करती है। उसकी मेहनत, संघर्ष और समर्पण मातृत्व को वंदनीय बनाते हैं।

बेनीपुरी जी उसे एक अत्यंत पूजनीय नारी के रूप में देखता है, क्योंकि उसके जीवन का पूरा केंद्र उसके बच्चों की खुशहाली और भलाई है। उसकी धार्मिक आस्था, कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य और अपने कर्तव्य को निभाने की क्षमता उसे आस्तिक नारी के रूप में उभारती है। वह अमूल्य मातृत्व का प्रतीक है, जिसे श्रद्धा और पूजा के योग्य माना जाता है।

बुधिया का जीवन संघर्ष, उसकी सामाजिक और आर्थिक परेशानियाँ उसके मातृत्व की महानता को कम नहीं कर पातीं। उलट, वह और अधिक मजबूत होकर अपने बच्चों के लिए जीवन समर्पित कर देती है। यह मातृत्व अपनी पीड़ा, त्याग और ममता के कारण महान है, जिसके सामने लेखक गहरी संवेदना, नमन और सम्मान झुकाना है।

निष्कर्ष :- रामवृक्ष बेनीपुरी की 'माटी की मूरतें' में प्रस्तुत विभिन्न पात्रों के माध्यम से उन्होंने ग्रामीण जीवन के गहरे सामाजिक, भावनात्मक और मानवीय पहलुओं का सजीव चित्रण किया है। रजिया की हँसी में जीवन की मासूमियत और संघर्षशीलता झलकती है, रजिया के व्यक्तित्व और उसके उस प्रभाव का प्रतीक है, जो उसने अपने आसपास के लोगों के जीवन में प्रेम, हर्ष और सकारात्मक ऊर्जा भर दी। जबकि बलदेव सिंह जैसे व्यक्तित्व में शारीरिक सौंदर्य और नैतिक गुणों का सामंजस्य देखने को मिलता है। उनके जैसे पति को पाना नारी के लिए धन्य और गौरवपूर्ण अनुभव है, क्योंकि वे आदर्श, सशक्त और प्रिय व्यक्ति के रूप में समाज में स्थापित हैं। सरजू भैया का निस्वार्थ सेवा-भाव और त्याग ग्राम समाज के लिए आदर्श प्रस्तुत करता है। मंगर की बहुआयामी पहचान साधारण हलवाहे से ऊपर उठकर स्वाभिमान और कर्मठता का परिचायक है, वहीं रूपा की आजी के प्रति गाँव की रुढ़िवादी सोच सामाजिक कुप्रथाओं को उजागर करती है। देव की दृढ़ता, साहस और दिव्यता भारतीय ग्रामीण चेतना की प्रेरणा स्रोत है जो विकट परिस्थितियों में भी धैर्य, साहस से काम लेता है। बालगोबिन भगत का गृहस्थ जीवन भी संतत्व की मिसाल प्रस्तुत करता है और हमें जीवन की घटनाओं को सहज रूप में स्वीकारना सीखात है। 'भौजी' से लेकर 'परमेसर' तक, सभी पात्र मानवीय कमजोरियों तथा अच्छाइयों के संगम हैं, जो जीवन की वास्तविकता को प्रतिबिंबित करते हैं। बैजू मामा की

साधारण जरूरतों के लिए की गई छोटी-छोटी चोरियां उनके भोलेपन और संघर्ष को दर्शाती हैं। सुभान खां का व्यक्तित्व साम्प्रदायिक सद्भाव, ईमानदारी और परिश्रम का उत्कृष्ट उदाहरण है। वे न केवल अपने काम में निष्ठावान और मेहनती थे, बल्कि सभी धर्मों और समुदायों का समान आदर और सम्मान भी करते थे। बुधिया का चरित्र मातृत्व के सर्वोच्च आदर्शों का प्रतिनिधित्व करता है, जो कठिन परिश्रम, धैर्य और समर्पण से अपने बच्चों के लिए जीवन समर्पित करती है, और जिनके प्रति लेखक गहरी संवेदना और सम्मान प्रकट करता है। यह रेखाचित्र मातृत्त्व के त्याग और ममता की महत्ता को उजागर करता है।

इस प्रकार, "माटी की मूरतें" ग्रामीण समाज की सजीव प्रतिमाएँ हैं जो न केवल उनके जीवन के सुख-दुख का बखूबी चित्रण करती हैं, बल्कि उनकी सामाजिक, नैतिक और भावनात्मक आत्मा को भी उजागर करती हैं। ये मूरतें हमारे समकालीन और सामाजिक जीवन के लिए प्रेरणा, संवेदना और आत्मचिंतन का अवसर प्रदान करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ :-

i. बेनीपुरी और उनकी सौंदर्यमुखी सूर्योदयी कला, कलक्टर सिंह 'केसरी', स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 128.
ii. बहुमुखी प्रतिभा के धनी बेनीपुरी, रामस्वार्थ चौधरी' अभिनव' स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 406.
iii. दंडवत, राधाकृष्ण, स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या 347.
iv. माटी का आदमी- बेनीपुरी, उदयराज सिंह, स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 98.
v. हर कथानक के प्रति ईमानदार नौयत थी, मृदुला सिन्हा, स्मरण बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 306.
vi. श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी: एक अजेय साहित्य योद्धा, नंद किशोर नंदन, स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 235.
vii. लोकधर्मी सनाकार बेनीपुरी जी, अवधेश्वर अरुण, स्मरण बेनीपुरी, सपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या (70-71).
viii. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 98.
ix. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 23.
x. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 24.
xi". माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 33.
xii. माटी की मूरलें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 38.
xiii, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 39.
xiv. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 40.
xv. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 44.
xvi. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 44.
xvii, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या-53.
xviii, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 62.
xix माटी की मूरते, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या- 71.

xx. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, जान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या 74.
xxi. माटी की मूरतै, रामवृक्ष बेनीपुरी, जान गंगा, दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या 76.
xxii, बेनीपूरी ग्रंथावली, संपादक सुरेश शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, खंड- 1, पृष्ठ संख्त्या- 270.
xxiii कोई बेनीपुरी भी था, अजय तिवारी, स्मरण बेनीपुरी, संपादक महेन्द्र बेनीपुरी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ संख्या- 46.
xxiv, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली 2022, पृष्ठ संख्या- 25.
xxiv. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022 पृष्ठ संख्या- 97.
xvii, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली 2022 पृष्ठ संख्या- 106.
xxvii बेनीपुरी ग्रंथावली, संपादक सुरेश शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, खंड 1, पृष्ठ संख्या- 83.
xxviii, माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली 2022 पृष्ठ संख्या- 194.
xxx, बेनीपुरी ग्रंथावली, संपादक सुरेश शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, खंड 1, पृष्ठ संख्या- 86.
xxxi माटी की मूरते, रामवृक्ष बेनीपुरी, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2022 पृष्ठ संख्या- 120.

•